अंतर की घुमड़ती वेदना को आँखों की राह बाहर निकाल लेने पर मनुष्य जो भी निश्चय करता है वे भावुक क्षणों की अपेक्षा अधिक विवेकपूर्ण होते हैं।
(दाज्यू)

शेखर जोशी

जन्म: सन् 1932, अल्मोड़ा (उत्तरांचल)
प्रमुख रचनाएँ: कोसी का घटवार, साथ के लोग, दाज्यू, हलवाहा, नौरंगी बीमार है *(कहानी-संग्रह)*; एक पेड़ की याद *(शब्दचित्र-संग्रह)*
सम्मान: पहल सम्मान

पिछली सदी का छठवाँ दशक हिंदी कहानी के लिए युगांतकारी समय था। एक साथ कई युवा कहानीकारों ने अब तक चली आती कहानियों के रंग-ढंग से अलग तरह की कहानियाँ लिखनी शुरू कीं और देखते-देखते कहानी की विधा साहित्य-जगत के केंद्र में आ खड़ी हुई। उस पूरे उठान को नाम दिया गया ***नई कहानी आंदोलन****। इस आंदोलन के बीच उभरी हुई प्रतिभाओं में शेखर जोशी का स्थान अन्यतम है। उनकी कहानियाँ* ***नई कहानी आंदोलन*** *के प्रगतिशील पक्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। समाज का मेहनतकश और सुविधाहीन तबका उनकी कहानियों में जगह पाता है। निहायत सहज एवं आडंबरहीन भाषा-शैली में वे सामाजिक यथार्थ के बारीक नुक्तों को पकड़ते और प्रस्तुत करते हैं। उनके रचना-संसार से गुज़रते हुए समकालीन जनजीवन की बहुविध विडंबनाओं को महसूस किया जा सकता है। ऐसा करने में उनकी प्रगतिशील जीवन-दृष्टि और यथार्थ बोध का बड़ा योगदान रहा है।*

© NCERT not to be republished

शेखर जी की कहानियाँ विभिन्न भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त अंग्रेज़ी, पोलिश और रूसी में भी अनूदित हो चुकी हैं। उनकी प्रसिद्ध कहानी **दाज्यू** *पर चिल्ड्रंस फ़िल्म सोसाइटी द्वारा फ़िल्म का निर्माण भी हुआ है।*

गलता लोहा *शेखर जोशी की कहानी-कला का एक प्रतिनिधि नमूना है। समाज के जातिगत विभाजन पर कई कोणों से टिप्पणी करने वाली यह कहानी इस बात का उदाहरण है कि शेखर जोशी के लेखन में अर्थ की गहराई का दिखावा और बड़बोलापन जितना ही कम है, वास्तविक अर्थ-गांभीर्य उतना ही अधिक। लेखक की किसी मुखर टिप्पणी के बगैर ही पूरे पाठ से गुज़रते हुए हम यह देख पाते हैं कि एक मेधावी, किंतु निर्धन ब्राह्मण युवक मोहन किन परिस्थितियों के चलते उस मनोदशा तक पहुँचता है, जहाँ उसके लिए जातीय अभिमान बेमानी हो जाता है। सामाजिक विधि-निषेधों को ताक पर रखकर वह धनराम लोहार के आफर पर बैठता ही नहीं, उसके काम में भी अपनी कुशलता दिखाता है। मोहन का व्यक्तित्व जातिगत आधार पर निर्मित झूठे भाईचारे की जगह मेहनतकशों के सच्चे भाईचारे की प्रस्तावना करता प्रतीत होता है, मानो लोहा गलकर एक नया आकार ले रहा हो।*

© NCERT not to be republished

11066CH05

गलता लोहा

मोहन के पैर अनायास ही शिल्पकार टोले की ओर मुड़ गए। उसके मन के किसी कोने में शायद धनराम लोहार के आफर की वह अनुगूँज शेष थी जिसे वह पिछले तीन-चार दिनों से दुकान की ओर जाते हुए दूर से सुनता रहा था। निहाई पर रखे लाल गर्म लोहे पर पड़ती हथौड़े की धप्-धप् आवाज़, ठंडे लोहे पर लगती चोट से उठता ठनकता स्वर और निशाना साधने से पहले खाली निहाई पर पड़ती हथौड़ी की खनक जिन्हें वह दूर से ही पहचान सकता था।

लंबे बेंटवाले हँसुवे को लेकर वह घर से इस उद्देश्य से निकला था कि अपने खेतों के किनारे उग आई काँटेदार झाड़ियों को काट-छाँटकर साफ़ कर आएगा। बूढ़े वंशीधर जी के बूते का अब यह सब काम नहीं रहा। यही क्या, जन्म भर जिस पुरोहिताई के बूते पर उन्होंने घर-संसार चलाया था, वह भी अब वैसे कहाँ कर पाते हैं! यजमान लोग उनकी निष्ठा और संयम के कारण ही उनपर श्रद्धा रखते हैं लेकिन बुढ़ापे का जर्जर शरीर अब उतना कठिन श्रम और व्रत-उपवास नहीं झेल पाता। सुबह-सुबह जैसे उससे सहारा पाने की नीयत से ही उन्होंने गहरा निःश्वास लेकर कहा था-

'आज गणनाथ जाकर चंद्रदत्त जी के लिए रुद्रीपाठ करना था, अब मुश्किल ही लग रहा है। यह दो मील की सीधी चढ़ाई अब अपने बूते की नहीं। एकाएक ना भी नहीं कहा जा सकता, कुछ समझ में नहीं आता!'

© NCERT not to be republished

मोहन उनका आशय न समझता हो ऐसी बात नहीं लेकिन पिता की तरह ऐसे अनुष्ठान कर पाने का न उसे अभ्यास ही है और न वैसी गति। पिता की बातें सुनकर भी उसने उनका भार हलका करने का कोई सुझाव नहीं दिया। जैसे हवा में बात कह दी गई थी वैसे ही अनुत्तरित रह गई।

पिता का भार हलका करने के लिए वह खेतों की ओर चला था लेकिन हँसुवे की धार पर हाथ फेरते हुए उसे लगा वह पूरी तरह कुंद हो चुकी है।

धनराम अपने बाएँ हाथ से धौंकनी फूँकता हुआ दाएँ हाथ से भट्ठी में गरम होते लोहे को उलट-पलट रहा था और मोहन भट्ठी से दूर हटकर एक खाली कनिस्तर के ऊपर बैठा उसकी कारीगरी को पारखी निगाहों से देख रहा था।

'मास्टर त्रिलोक सिंह तो अब गुज़र गए होंगे,' मोहन ने पूछा।

वे दोनों अब अपने बचपन की दुनिया में लौट आए थे। धनराम की आँखों में एक चमक-सी आ गई। वह बोला, 'मास्साब भी क्या आदमी थे लला! अभी पिछले साल ही गुज़रे। सच कहूँ, आखिरी दम तक उनकी छड़ी का डर लगा ही रहता था।'

दोनों हो-हो कर हँस दिए। कुछ क्षणों के लिए वे दोनों ही जैसे किसी बीती हुई दुनिया में लौट गए।

...गोपाल सिंह की दुकान से हुक्के का आखिरी कश खींचकर त्रिलोक सिंह स्कूल की चहारदीवारी में उतरते हैं।

थोड़ी देर पहले तक धमाचौकड़ी मचाते, उठा-पटक करते और बांज के पेड़ों की टहनियों पर झूलते बच्चों को जैसे साँप सूँघ गया है। कड़े स्वर में वह पूछते हैं, 'प्रार्थना कर ली तुम लोगों ने?'

यह जानते हुए भी कि यदि प्रार्थना हो गई होती तो गोपाल सिंह की दुकान तक उनका समवेत स्वर पहुँचता ही, त्रिलोक सिंह घूर-घूरकर एक-एक लड़के को देखते हैं। फिर वही कड़कदार आवाज़, 'मोहन नहीं आया आज?'

मोहन उनका चहेता शिष्य था। पुरोहित खानदान का कुशाग्र बुद्धि का बालक पढ़ने में ही नहीं, गायन में भी बेजोड़। त्रिलोक सिंह मास्टर ने उसे पूरे स्कूल का मॉनीटर बना रखा था। वही सुबह-सुबह, 'हे प्रभो आनंददाता! ज्ञान हमको दीजिए।' का पहला स्वर उठाकर प्रार्थना शुरू करता था।

मोहन को लेकर मास्टर त्रिलोक सिंह को बड़ी उम्मीदें थीं। कक्षा में किसी छात्र को कोई सवाल न आने पर वही सवाल वे मोहन से पूछते और उनका अनुमान सही निकलता। मोहन ठीक-ठीक उत्तर देकर उन्हें संतुष्ट कर देता और तब वे उस फिसड्डी बालक को दंड देने का भार मोहन पर डाल देते।

'पकड़ इसका कान, और लगवा इससे दस उठक-बैठक,' वे आदेश दे देते। धनराम भी उन अनेक छात्रों में से एक था जिसने त्रिलोक सिंह मास्टर के आदेश पर अपने हमजोली मोहन के हाथों कई बार बेंत खाए थे या कान खिंचवाए थे। मोहन के प्रति थोड़ी-बहुत ईर्ष्या रहने पर भी धनराम प्रारंभ से ही उसके प्रति स्नेह और आदर का भाव रखता था। इसका एक कारण शायद यह था कि बचपन से ही मन में बैठा दी गई जातिगत हीनता के कारण धनराम ने कभी मोहन को अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं समझा बल्कि वह इसे मोहन का अधिकार ही समझता रहा था। बीच-बीच में त्रिलोक सिंह मास्टर का यह कहना कि मोहन एक दिन बहुत बड़ा आदमी बनकर स्कूल का और उनका नाम ऊँचा करेगा, धनराम के लिए किसी और तरह से सोचने की गुंजाइश ही नहीं रखता था।

और धनराम! वह गाँव के दूसरे खेतिहर या मज़दूर परिवारों के लड़कों की तरह किसी प्रकार तीसरे दर्जे तक ही स्कूल का मुँह देख पाया था। त्रिलोक सिंह मास्टर कभी-कभार ही उस पर विशेष ध्यान देते थे। एक दिन अचानक ही उन्होंने पूछ लिया था, 'धनुवाँ! तेरह का पहाड़ा सुना तो!'

बारह तक का पहाड़ा तो उसने किसी तरह याद कर लिया था लेकिन तेरह का ही पहाड़ा उसके लिए पहाड़ हो गया था।

'तेरै एकम तेरै
तेरै दूणी चौबीस'

सटाक्! एक संटी उसकी पिंडलियों पर मास्साब ने लगाई थी कि वह टूट गई। गुस्से में उन्होंने आदेश दिया, 'जा! नाले से एक अच्छी मज़बूत संटी तोड़कर ला, फिर तुझे तेरह का पहाड़ा याद कराता हूँ।'

© NCERT not to be republished

त्रिलोक सिंह मास्टर का यह सामान्य नियम था। सजा पाने वाले को ही अपने लिए हथियार भी जुटाना होता था; और ज़ाहिर है, बलि का बकरा अपने से अधिक मास्टर के संतोष को ध्यान में रखकर टहनी का चुनाव ऐसे करता जैसे वह अपने लिए नहीं बल्कि किसी दूसरे को दंडित करने के लिए हथियार का चुनाव कर रहा हो।

धनराम की मंदबुद्धि रही हो या मन में बैठा हुआ डर कि पूरे दिन घोटा लगाने पर भी उसे तेरह का पहाड़ा याद नहीं हो पाया था। छुट्टी के समय जब मास्साब ने उससे दुबारा पहाड़ा सुनाने को कहा तो तीसरी सीढ़ी तक पहुँचते-पहुँचते वह फिर लड़खड़ा गया था। लेकिन इस बार मास्टर त्रिलोक सिंह ने उसके लाए हुए बेंत का उपयोग करने की बजाय ज़बान की चाबुक लगा दी थी, 'तेरे दिमाग में तो लोहा भरा है रे! विद्या का ताप कहाँ लगेगा इसमें?' अपने थैले से पाँच-छह दराँतियाँ निकालकर उन्होंने धनराम को धार लगा लाने के लिए पकड़ा दी थीं। किताबों की विद्या का ताप लगाने की सामर्थ्य धनराम के पिता की नहीं थी। धनराम हाथ-पैर चलाने लायक हुआ ही था कि बाप ने उसे धौंकनी फूँकने या सान लगाने के कामों में उलझाना शुरू कर दिया और फिर धीरे-धीरे हथौड़े से लेकर घन चलाने की विद्या सिखाने लगा। फ़र्क इतना ही था कि जहाँ मास्टर त्रिलोक सिंह उसे अपनी पसंद का बेंत चुनने की छूट दे देते थे वहाँ गंगाराम इसका चुनाव स्वयं करते थे और ज़रा-सी गलती होने पर छड़, बेंत, हत्था जो भी हाथ लग जाता उसी से अपना प्रसाद दे देते। एक दिन गंगाराम अचानक चल बसे तो धनराम ने सहज भाव से उनकी विरासत सँभाल ली और पास-पड़ोस के गाँव वालों को याद नहीं रहा वे कब गंगाराम के आफर को धनराम का आफर कहने लगे थे।

प्राइमरी स्कूल की सीमा लाँघते ही मोहन ने छात्रवृत्ति प्राप्त कर त्रिलोक सिंह मास्टर की भविष्यवाणी को किसी हद तक सिद्ध कर दिया तो साधारण हैसियत वाले यजमानों की पुरोहिताई करने वाले वंशीधर तिवारी का हौसला बढ़ गया और वे भी अपने पुत्र को पढ़ा-लिखाकर बड़ा आदमी बनाने का स्वप्न देखने लगे। पीढ़ियों से चले आते पैतृक धंधे ने उन्हें निराश कर दिया था। दान-दक्षिणा के बूते पर वे किसी

© NCERT not to be republished

तरह परिवार का आधा पेट भर पाते थे। मोहन पढ़-लिखकर वंश का दारिद्र्य मिटा दे यह उनकी हार्दिक इच्छा थी। लेकिन इच्छा होने भर से ही सब-कुछ नहीं हो जाता। आगे की पढ़ाई के लिए जो स्कूल था वह गाँव से चार मील दूर था। दो मील की चढ़ाई के अलावा बरसात के मौसम में रास्ते में पड़ने वाली नदी की समस्या अलग थी। तो भी वंशीधर ने हिम्मत नहीं हारी और लड़के का नाम स्कूल में लिखा दिया। बालक मोहन लंबा रास्ता तय कर स्कूल जाता और छुट्टी के बाद थका-माँदा घर लौटता तो पिता पुराणों की कथाओं से विद्याव्यसनी बालकों का उदाहरण देकर उसे उत्साहित करने की कोशिश करते रहते।

वर्षा के दिनों में नदी पार करने की कठिनाई को देखते हुए वंशीधर ने नदी पार के गाँव में एक यजमान के घर पर मोहन का डेरा तय कर दिया था। घर के अन्य बच्चों की तरह मोहन खा-पीकर स्कूल जाता और छुट्टियों में नदी उतार पर होने पर गाँव लौट आता था। संयोग की बात, एक बार छुट्टी के पहले दिन जब नदी का पानी उतार पर ही था और मोहन कुछ घसियारों के साथ नदी पार कर घर आ रहा था तो पहाड़ी के दूसरी ओर भारी वर्षा होने के कारण अचानक नदी का पानी बढ़ गया। पहले नदी की धारा में झाड़-झंखाड़ और पात-पतेल आने शुरू हुए तो अनुभवी घसियारों ने तेज़ी से पानी को काटकर आगे बढ़ने की कोशिश की लेकिन किनारे पहुँचते-न-पहुँचते मटमैले पानी का रेला उन तक आ ही पहुँचा। वे लोग किसी प्रकार सकुशल इस पार पहुँचने में सफल हो सके। इस घटना के बाद वंशीधर घबरा गए और बच्चे के भविष्य को लेकर चिंतित रहने लगे।

बिरादरी के एक संपन्न परिवार का युवक रमेश उन दिनों लखनऊ से छुट्टियों में गाँव आया हुआ था। बातों-बातों में वंशीधर ने मोहन की पढ़ाई के संबंध में उससे अपनी चिंता प्रकट की तो उसने न केवल अपनी सहानुभूति जतलाई बल्कि उन्हें सुझाव दिया कि वे मोहन को उसके साथ ही लखनऊ भेज दें। घर में जहाँ चार प्राणी हैं एक और बढ़ जाने में कोई अंतर नहीं पड़ता, बल्कि बड़े शहर में रहकर वह अच्छी तरह पढ़-लिख सकेगा।

वंशीधर को जैसे रमेश के रूप में साक्षात् भगवान मिल गए हों। उनकी आँखों में पानी छलछलाने लगा। भरे गले से वे केवल इतना ही कह पाए कि बिरादरी का यही सहारा होता है।

छुट्टियाँ शेष होने पर रमेश वापिस लौटा तो माँ-बाप और अपनी गाँव की दुनिया से बिछुड़कर सहमा-सहमा-सा मोहन भी उसके साथ लखनऊ आ पहुँचा। अब मोहन की ज़िंदगी का एक नया अध्याय शुरू हुआ। घर की दोनों महिलाओं, जिन्हें वह चाची और भाभी कह कर पुकारता था, का हाथ बँटाने के अलावा धीरे-धीरे वह मुहल्ले की सभी चाचियों और भाभियों के लिए काम-काज में हाथ बँटाने का साधन बन गया।

'मोहन! थोड़ा दही तो ला दे बाज़ार से।'

'मोहन! ये कपड़े धोबी को दे तो आ।'

'मोहन! एक किलो आलू तो ला दे।'

औसत दफ़्तरी बड़े बाबू की हैसियत वाले रमेश के लिए मोहन को अपना भाई-बिरादर बतलाना अपने सम्मान के विरुद्ध जान पड़ता था और उसे घरेलू नौकर से अधिक हैसियत वह नहीं देता था, इस बात को मोहन भी समझने लगा था। थोड़ी-बहुत हीला-हवाली करने के बाद रमेश ने निकट के ही एक साधारण से स्कूल में उसका नाम लिखवा दिया। लेकिन एकदम नए वातावरण और रात-दिन के काम के बोझ के कारण गाँव का वह मेधावी छात्र शहर के स्कूली जीवन में अपनी कोई पहचान नहीं बना पाया। उसका जीवन एक बँधी-बँधाई लीक पर चलता रहा। साल में एक बार गरमियों की छुट्टी में गाँव जाने का मौका भी तभी मिलता जब रमेश या उसके घर का कोई प्राणी गाँव जाने वाला होता वरना उन छुट्टियों को भी अगले दरजे की तैयारी के नाम पर उसे शहर में ही गुज़ार देना पड़ता था। अगले दरजे की तैयारी तो बहाना भर थी, सवाल रमेश और उसकी गृहस्थी की सुविधा-असुविधा का था। मोहन ने परिस्थितियों से समझौता कर लिया था क्योंकि और कोई चारा भी नहीं था। घरवालों को अपनी वास्तविक स्थिति बतलाकर वह दुखी नहीं करना चाहता था। वंशीधर उसके सुनहरे भविष्य के सपने देख रहे थे।

© NCERT not to be republished

आठवीं कक्षा की पढ़ाई समाप्त कर छुट्टियों में मोहन गाँव आया हुआ था। जब वह लौटकर लखनऊ पहुँचा तो उसने अनुभव किया कि रमेश के परिवार के सभी लोग जैसे उसकी आगे की पढ़ाई के पक्ष में नहीं हैं। बात घूम-फिरकर जिस ओर से उठती वह इसी मुद्दे पर ज़रूर खत्म हो जाती कि हज़ारों-लाखों बी.ए.,एम.ए. मारे-मारे बेकार फिर रहे हैं। ऐसी पढ़ाई से अच्छा तो आदमी कोई हाथ का काम सीख ले। रमेश ने अपने किसी परिचित के प्रभाव से उसे एक तकनीकी स्कूल में भर्ती करा दिया। मोहन की दिनचर्या में कोई विशेष अंतर नहीं आया था। वह पहले की तरह स्कूल और घरेलू काम-काज में व्यस्त रहता। धीरे-धीरे डेढ़-दो वर्ष का यह समय भी बीत गया और मोहन अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए कारखानों और फैक्टरियों के चक्कर लगाने लगा।

वंशीधर से जब भी कोई मोहन के विषय में पूछता तो वे उत्साह के साथ उसकी पढ़ाई की बाबत बताने लगते और मन-ही-मन उनको विश्वास था कि वह एक दिन बड़ा अफ़सर बनकर लौटेगा। लेकिन जब उन्हें वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो न सिर्फ़ गहरा दुख हुआ बल्कि वे लोगों को अपने स्वप्नभंग की जानकारी देने का साहस नहीं जुटा पाए।

धनराम ने भी एक दिन उनसे मोहन के बारे में पूछा था। घास का एक तिनका तोड़कर दाँत खोदते हुए उन्होंने बताया था कि उसकी सेक्रेटेरियट में नियुक्ति हो गई है और शीघ्र ही विभागीय परीक्षाएँ देकर वह बड़े पद पर पहुँच जाएगा। धनराम को त्रिलोक सिंह मास्टर की भविष्यवाणी पर पूरा यकीन था– ऐसा होना ही था उसने सोचा। दाँतों के बीच में तिनका दबाकर असत्य भाषण का दोष न लगने का संतोष लेकर वंशीधर आगे बढ़ गए थे। धनराम के शब्द, 'मोहन लला बचपन से ही बड़े बुद्धिमान थे', उन्हें बहुत देर तक कचोटते रहे।

त्रिलोक सिंह मास्टर की बातों के साथ-साथ बचपन से लेकर अब तक के जीवन के कई प्रसंगों पर मोहन और धनराम बातें करते रहे। धनराम ने मोहन के

© NCERT not to be republished

हँसुवे के फाल को बेंत से निकालकर भट्ठी में तपाया और मन लगाकर उसकी धार गढ़ दी। गरम लोहे को हवा में ठंडा होने में काफ़ी समय लग गया था, धनराम ने उसे वापिस बेंत पहनाकर मोहन को लौटाते हुए जैसे अपनी भूल-चूक के लिए माफ़ी माँगी हो–

'बेचारे पंडित जी को तो फ़ुर्सत नहीं रहती लेकिन किसी के हाथ भिजवा देते तो मैं तत्काल बना देता।'

मोहन ने उत्तर में कुछ नहीं कहा लेकिन हँसुवे को हाथ में लेकर वह फिर वहीं बैठा रहा जैसे उसे वापिस जाने की कोई जल्दी न रही हो।

सामान्य तौर से ब्राह्मण टोले के लोगों का शिल्पकार टोले में उठना-बैठना नहीं होता था। किसी काम-काज के सिलसिले में यदि शिल्पकार टोले में आना ही पड़ा तो खड़े-खड़े बातचीत निपटा ली जाती थी। ब्राह्मण टोले के लोगों को बैठने के लिए कहना भी उनकी मर्यादा के विरुद्ध समझा जाता था। पिछले कुछ वर्षों से शहर में जा रहने के बावजूद मोहन गाँव की इन मान्यताओं से अपरिचित हो ऐसा संभव नहीं था। धनराम मन-ही-मन उसके व्यवहार से असमंजस में पड़ा था लेकिन प्रकट में उसने कुछ नहीं कहा और अपना काम करता रहा।

लोहे की एक मोटी छड़ को भट्ठी में गलाकर धनराम गोलाई में मोड़ने की कोशिश कर रहा था। एक हाथ से सँड़सी पकड़कर जब वह दूसरे हाथ से हथौड़े की चोट मारता तो निहाई पर ठीक घाट में सिरा न फँसने के कारण लोहा उचित ढंग से मुड़ नहीं पा रहा था। मोहन कुछ देर तक उसे काम करते हुए देखता रहा फिर जैसे अपना संकोच त्यागकर उसने दूसरी पकड़ से लोहे को स्थिर कर लिया और धनराम के हाथ से हथौड़ा लेकर नपी-तुली चोट मारते, अभ्यस्त हाथों से धौंकनी फूँककर लोहे को दुबारा भट्ठी में गरम करते और फिर निहाई पर रखकर उसे ठोकते-पीटते सुघड़ गोले का रूप दे डाला।

मोहन का यह हस्तक्षेप इतनी फुर्ती और आकस्मिक ढंग से हुआ था कि धनराम को चूक का मौका ही नहीं मिला। वह अवाक् मोहन की ओर देखता रहा। उसे मोहन

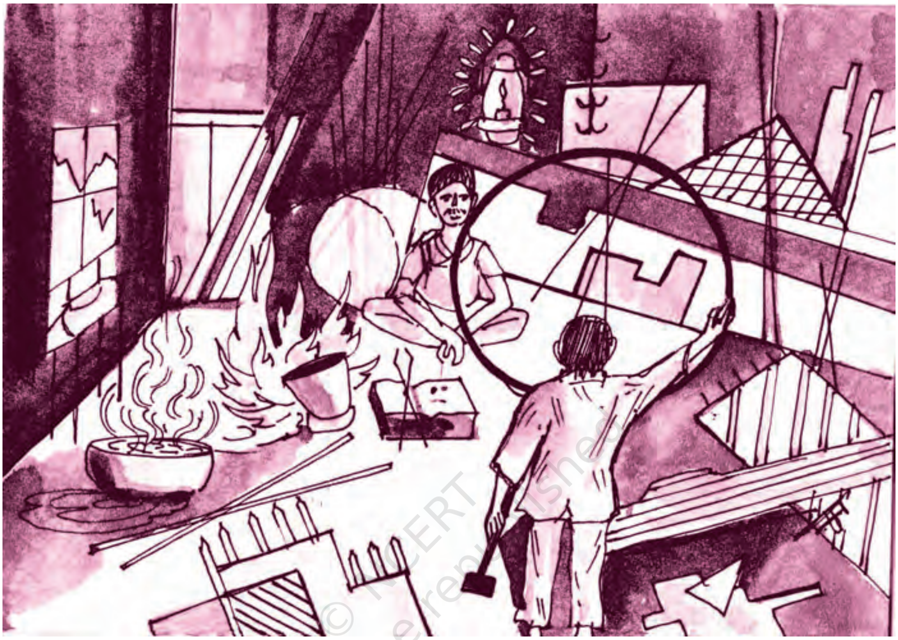

की कारीगरी पर उतना आश्चर्य नहीं हुआ जितना पुरोहित खानदान के एक युवक का इस तरह के काम में, उसकी भट्ठी पर बैठकर, हाथ डालने पर हुआ था। वह शंकित दृष्टि से इधर-उधर देखने लगा।

धनराम की संकोच, असमंजस और धर्म-संकट की स्थिति से उदासीन मोहन संतुष्ट भाव से अपने लोहे के छल्ले की त्रुटिहीन गोलाई को जाँच रहा था। उसने धनराम की ओर अपनी कारीगरी की स्वीकृति पाने की मुद्रा में देखा। उसकी आँखों में एक सर्जक की चमक थी– जिसमें न स्पर्धा थी और न ही किसी प्रकार की हार-जीत का भाव।

अभ्यास

पाठ के साथ

1. कहानी के उस प्रसंग का उल्लेख करें, जिसमें किताबों की विद्या और घन चलाने की विद्या का ज़िक्र आया है।
2. धनराम मोहन को अपना प्रतिद्वंद्वी क्यों नहीं समझता था?
3. धनराम को मोहन के किस व्यवहार पर आश्चर्य होता है और क्यों?
4. मोहन के लखनऊ आने के बाद के समय को लेखक ने उसके ***जीवन का एक नया अध्याय*** क्यों कहा है?
5. मास्टर त्रिलोक सिंह के किस कथन को लेखक ने ***ज़बान के चाबुक*** कहा है और क्यों?
6. (1) ***बिरादरी का यही सहारा होता है।***
   - क. किसने किससे कहा?
   - ख. किस प्रसंग में कहा?
   - ग. किस आशय से कहा?
   - घ. क्या कहानी में यह आशय स्पष्ट हुआ है?

   (2) ***उसकी आँखों में एक सर्जक की चमक थी***– कहानी का यह वाक्य–
   - क. किसके लिए कहा गया है?
   - ख. किस प्रसंग में कहा गया है?
   - ग. यह पात्र-विशेष के किन चारित्रिक पहलुओं को उजागर करता है?

© NCERT not to be republished

पाठ के आस-पास

1. गाँव और शहर, दोनों जगहों पर चलने वाले मोहन के जीवन-संघर्ष में क्या फ़र्क है? चर्चा करें और लिखें।
2. एक अध्यापक के रूप में त्रिलोक सिंह का व्यक्तित्व आपको कैसा लगता है? अपनी समझ में उनकी खूबियों और खामियों पर विचार करें।
3. ***गलता लोहा*** कहानी का अंत एक खास तरीके से होता है। क्या इस कहानी का कोई अन्य अंत हो सकता है? चर्चा करें।

भाषा की बात

1. पाठ में निम्नलिखित शब्द लौहकर्म से संबंधित हैं। किसका क्या प्रयोजन है? शब्द के सामने लिखिए–
    1. धौंकनी ....
    2. दराँती ....
    3. सँड़सी ....
    4. आफर ....
    5. हथौड़ा ....
2. पाठ में ***काट-छाँटकर*** जैसे कई संयुक्त क्रिया शब्दों का प्रयोग हुआ है। कोई पाँच शब्द पाठ में से चुनकर लिखिए और अपने वाक्यों में प्रयोग कीजिए।
3. ***बूते का*** प्रयोग पाठ में तीन स्थानों पर हुआ है उन्हें छाँटकर लिखिए और जिन संदर्भों में उनका प्रयोग है, उन संदर्भों में उन्हें स्पष्ट कीजिए।
4. ***मोहन! थोड़ा दही तो ला दे बाज़ार से।***
   मोहन! ये कपड़े धोबी को दे तो आ।
   मोहन! एक किलो आलू तो ला दे।
   ऊपर के वाक्यों में मोहन को आदेश दिए गए हैं। इन वाक्यों में ***आप*** सर्वनाम का इस्तेमाल करते हुए उन्हें दुबारा लिखिए।

© NCERT not to be republished

विज्ञापन की दुनिया

- विभिन्न व्यापारी अपने उत्पाद की बिक्री के लिए अनेक तरह के विज्ञापन बनाते हैं। आप भी हाथ से बनी किसी वस्तु की बिक्री के लिए एक ऐसा विज्ञापन बनाइए जिससे हस्तकला का कारोबार चले।

शब्द-छवि

निहाई	–	एक विशेष प्रकार का लोहे का ठोस टुकड़ा, जिस पर लोहा आदि धातुओं को रखकर पीटते हैं।
अनायास	–	बिना प्रयास के
अनुगूँज	–	प्रतिध्वनि, रह-रहकर कानों में गूँजने वाली आवाज़
हँसुवे	–	घास काटने का औज़ार, दराँती

पुरोहिताई	–	पुरोहित (धार्मिक कृत्य कराने वाला) का व्यवसाय, पुरोहित का भाव
निष्ठा	–	श्रद्धा, विश्वास, एकाग्रता, दृढ़ता
रुद्रीपाठ	–	शंकर की आराधना का एक प्रकार
धौंकनी	–	लुहार या सुनारों की आग दहकाने वाली लोहे या बाँस की नली
कुशाग्र बुद्धि	–	तीक्ष्ण बुद्धिवाला, पैनी बुद्धिवाला
संटी	–	पतली डंडी या छड़ी
प्रतिद्वंद्वी	–	मुकाबला करने वाला, विपक्षी, विरोधी, प्रतिपक्षी
विद्याव्यसनी	–	पढ़ने में रुचि रखने वाला
घसियारे	–	घास काटने का काम करने वाले
सेक्रेटेरियट	–	सचिवालय
त्रुटिहीन	–	जिसमें कोई कमी न हो

© NCERT not to be republished